# विज्ञान और प्रयोग

सुशील जोशी

पिछले भाग में हमने बात को इस सवाल पर छोड़ा था कि लैमार्क के अर्जित गुणों के हस्तान्तरण और डार्विन के विविधता में से चयन की परिकल्पनाओं के बीच फैसला जैव-विकास की अवधारणा को आगे ले जाने के लिए निर्णायक महत्व का सवाल था। हमने यह भी देखा था कि इस दुविधा का समाधान सिर्फ अवलोकनों के आधार पर नहीं हो सकता। अब आगे बढ़ते हैं।

## प्रयोग का पदार्पण

शायद आपको याद हो (या शायद न याद हो) कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी गुणों के हस्तान्तरण (यानी आनुवंशिकता) का फैसला सिर्फ अवलोकनों से नहीं हुआ था। इसी प्रकार से लैमार्क के अर्जित गुणों के अगली पीढ़ी में पहुँचने का सवाल भी अवलोकनों से नहीं सुलझा था। इन दोनों ही सवालों के हल के लिए प्रयोग करना आवश्यक हो गया था।

*कृपया इस बात पर विचार कीजिए कि इन दोनों सवालों के जवाब सिर्फ अवलोकन से क्यों नहीं मिल सकते। क्या आप सोच सकते हैं कि उपरोक्त*

*सवालों का समाधान पाने के लिए किस तरह के प्रयोग किए जा सकते हैं?*

*क्या आपने कभी ऐसे प्रयोगों के बारे में पढ़ा है?*

सवाल को स्पष्ट करने की कोशिश करते हैं। मान लीजिए अपने जीवन काल में किसी पहलवान ने कसरत कर करके मांसपेशियाँ सुदृढ़ की हैं। आप जानना चाहते हैं कि क्या उसकी सन्तानों को ये सुदृढ़ मांसपेशियाँ जन्मजात विरासत में मिलेंगी? यह जानने के लिए आप उस पहलवान के बच्चों का अवलोकन करेंगे, शायद उसके भी बच्चों का अवलोकन करें। काफी सम्भावना है कि उसके बच्चों की मांसपेशियाँ भी काफी मज़बूत होंगी। मगर सम्भव है कि वह पहलवानों का परिवार हो और बच्चों की मज़बूत मांसपेशियाँ भी कसरत के परिणामस्वरूप ही विकसित हुई हों। या यह भी हो सकता है कि पहलवान द्वारा मेहनत करके विकसित की गई मांसपेशियाँ आनुवंशिक गुण के रूप में बच्चों को मिली हों। आप चाहे जितने अवलोकन कर लें इस दुविधा का हल नहीं निकलेगा। हाँ, अवलोकनों को करते हुए यदि आप कुछ विशेष बातों का ध्यान रखें तो शायद किसी निष्कर्ष पर पहुँच पाएँ।

जैसे अवलोकन इस तरह करने होंगे कि आप वंशानुगत गुणों और अर्जित गुणों को अलग-अलग करके देख पाएँ। इसका मतलब है कि आपको

विशेष परिस्थितियाँ निर्मित करके अवलोकन करना होंगे। दूसरे शब्दों में, आपको प्रयोग करना होंगे। तो अब हम इस बात पर पहुँच गए हैं कि अवलोकन और प्रयोग दो अलग-अलग विधियाँ हैं सूचना हासिल करने की। आइए देखें कि उक्त दो सवालों के सन्दर्भ में क्या प्रयोग किए गए थे।

## परिकल्पनाओं के बीच चुनाव

जैव-विकास के दो सिद्धान्त सामने थे। इन दोनों में दो प्रमुख अन्तर थे। लैमार्क के सिद्धान्त की मूल मान्यता

यह थी कि हरेक जीव जीवन जीने की जद्दोजहद में कई नए शारीरिक व व्यवहारगत गुण अर्जित करता है। जैसे मज़बूत मांसपेशियाँ, लम्बी गर्दन, पैने दाँत, तेज़ भागने की क्षमता वगैरह। ये अर्जित गुण उसे जीवनयापन में कुछ लाभ प्रदान करते हैं। दूसरी ओर, कभी-कभी जीव अपने कुछ अंगों का उपयोग कम करता है या न के बराबर करता है। इनका क्षय होता है। लैमार्क के मुताबिक ये अर्जित गुण अगली पीढ़ी को प्राप्त हो जाते हैं, जो जन्म से ही इन गुणों से लैस हो जाती है - 'स्वाभाविक' रूप से यह अगली पीढ़ी ज़्यादा विकसित है। लैमार्क का सिद्धान्त कहता है कि धीरे-धीरे कई पीढ़ियों में इन अर्जित गुणों के संचय से ही जैव-विकास सम्पन्न होता है।

दूसरी ओर डार्विन का पूरा सिद्धान्त प्राकृतिक विविधता पर टिका है। जीवों की किसी भी प्रजाति में और किसी भी आबादी में भरपूर विविधता पाई जाती है। देखा जाए तो एक ही प्रजाति का हर सदस्य अनूठा होता है। डार्विन कहते हैं कि इस विविधता के चलते कुछ जीवों को लाभ मिलता है जबकि कुछ जीव नुकसान में रहते हैं। जिन जीवों को लाभ मिलता है वे अपनी ज़्यादा सन्तानें छोड़ते हैं। यदि उनमें पाए जाने वाले अनूठे गुण आनुवंशिक हों, तो वे अगली पीढ़ी को विरासत में मिलेंगे। इस तरह से क्रमशः विविधता में से चयन होता जाएगा और आबादियाँ विकसित होंगी।

इन दो परिकल्पनाओं के बीच अन्तर स्पष्ट हैं।

पहला अन्तर तो यह है कि लैमार्क के सिद्धान्त के मुताबिक हर एक जीव का विकास होता है और वह उसके जीवन काल में होता है जबकि डार्विन के सिद्धान्त के अनुसार विकास जीवों का नहीं बल्कि आबादियों का होता है।

दूसरा अन्तर है कि लैमार्क मानते हैं कि किसी जीव द्वारा उसके जीवन काल में अर्जित किए गए गुण अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं जबकि डार्विन के हिसाब से ये गुण किसी भी जीव में जन्मजात होते हैं और विविधता के रूप में पाए जाते हैं।

तो इन दो सिद्धान्तों के बीच तुलना किस आधार पर हो? क्या अवलोकनों से काम बन पाएगा? कितनी पीढ़ियों का अवलोकन करना पड़ेगा? किन गुणों का अवलोकन करना पड़ेगा? और अन्ततः यदि कुछ गुण संचित हुए तो क्या यह पक्के तौर पर कहा जा सकेगा कि ये अर्जित गुण थे या जन्मजात विविधता के हिस्से थे?

है ना मुश्किल सवाल? खास तौर से अर्जित गुणों का हस्तान्तरण जीव विज्ञान और सामाजिक अध्ययनों का एक प्रमुख सवाल रहा है।

*समाज में एक आम मान्यता है कि बुद्धि एक खानदानी गुण होता है। बुद्धिमान माता-पिता के बच्चे भी बुद्धिमान ही होते हैं। क्या आप इस*

*बात से सहमत हैं? क्या आप इस मान्यता की जाँच के लिए कोई प्रयोग सोच सकते हैं? कृपया विस्तार में बताइए कि यह प्रयोग कैसे करना होगा और इसमें आनुवंशिकता और परवरिश के कारण पैदा होने वाले प्रभावों को कैसे अलग-अलग करके परखा जाएगा?*

ऐसे सवालों के समाधान के लिए हम सिर्फ अवलोकनों के भरोसे नहीं रह सकते। जैसे पौ फटते ही पक्षी सक्रिय हो जाते हैं। यहाँ दो सम्भावनाएँ तो साफ नज़र आती हैं। सूरज उगने के साथ ही रोशनी फैल जाती है। दूसरी ओर, तापमान भी बढ़ने लगता है। अब कैसे बताएँ कि पक्षी रोशनी के कारण सक्रिय हुए हैं या गर्मी के कारण। ऐसे मामलों में हमें ऐसी परिस्थितियाँ निर्मित करनी पड़ती हैं जहाँ हम एक-एक करके इन चीज़ों को बदलकर देख सकें और बता पाएँ कि वह घटना किस कारक की वजह से हो रही है। यहाँ प्रयोग की भूमिका आती है। वैसे कई जीव वैज्ञानिकों ने अवलोकनों और तर्कों के आधार पर लैमार्क की धारणा को ध्वस्त कर दिया था।

जैसे एक तर्क यह था कि सजीवों में शुक्राणु या अण्डाणु बनाने वाली कोशिकाओं का निर्माण जन्म के समय ही हो जाता है। अगली पीढ़ी का निर्माण इन्हीं शुक्राणुओं और अण्डाणुओं से होता है। तो बाद के जीवन में अर्जित गुण इनमें कैसे प्रविष्ट होंगे? वैसे भी सजीवों में कई गुण (जैसे नाखून वगैरह) तो भ्रूण के विकास में देर से प्रकट होते हैं जबकि इस समय

तक भ्रूण में जनन कोशिकाएँ बन चुकी होती हैं। तो उसमें ऐसे गुणों का रस कहाँ से आता होगा? खैर, इन सवालों का पक्का जवाब प्रयोगों से मिला।

*क्या आप कोई ऐसा प्रयोग डिज़ाइन कर सकते हैं जो अर्जित गुणों के हस्तान्तरण की मान्यता के खिलाफ स्पष्ट प्रमाण दे सके?*

## पूँछकटे चूहे

ऐसा एक प्रयोग जर्मन वैज्ञानिक ऑगस्ट वाइसमैन (1834-1914) ने 1891 में किया था। आज के ज़माने में जन्तु प्रयोगों को लेकर जागरूकता के चलते ऐसा प्रयोग करना सम्भव भी न होता। वाइसमैन ने 68 सफेद चूहे लिए। इनकी पूँछ काट दी। फिर इनकी सन्तानों और सन्तानों की सन्तानों की पूँछें भी काटते गए। ऐसा उन्होंने पाँच पीढ़ियों तक किया।

मगर वाइसमैन ने देखा कि पाँचवीं पीढ़ी में भी बगैर पूँछ का चूहा पैदा होना तो दूर, चूहों की पूँछ छोटी भी नहीं हुई थी। उन्होंने अपने शोध पत्र में बताया, 'पाँच पीढ़ियों में पूँछकटे चूहों के प्रजनन से 901 चूहे पैदा हुए। मगर इनमें एक भी ऐसा चूहा नहीं था जिसकी पूँछ सामान्य से छोटी हो या पूँछ में कोई विकृति हो'।

*क्या आपके विचार में इस प्रयोग से अर्जित गुणों के पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरण की धारणा ध्वस्त हो जाती है?*

*क्या आपको यकीन है कि वाइसमैन को एक भी छोटी पूँछ वाला चूहा नहीं मिला होगा?*

*नैतिक सवालों को छोड़ भी दें, तो इस प्रयोग की क्या दिक्कतें हैं?*

बहरहाल, यह प्रयोग एक धारणा की जाँच के लिए किया गया था। धारणा यह थी कि किसी जीव द्वारा अपने जीवनकाल में अर्जित गुणों का हस्तान्तरण अगली पीढ़ी को होता है। कुछ अवलोकनों की व्याख्या के लिए प्रस्तुत की गई ऐसी धारणाओं को हम परिकल्पना यानी हायपोथीसिस कहते हैं। विज्ञान में कई सारे प्रयोग परिकल्पनाओं की जाँच के लिए किए जाते हैं। क्या आपने ध्यान दिया कि वाइसमैन ने 901 चूहों में देखा था कि बगैर पूँछ का तो एक भी चूहा पैदा नहीं हुआ? साथ ही उन्होंने यह भी देखने की कोशिश की थी कि क्या पूँछ की साइज़ में कोई कमी आई है।

यदि हम विविधता की बात पर ध्यान दें, तो ऐसा तो नहीं हो सकता कि हर पीढ़ी के सारे चूहों की पूँछें एक बराबर रही होंगी। ज़रूर कुछ चूहे ऐसे भी रहे होंगे जिनकी पूँछ छोटी रही होंगी। तो तुलना कैसे करेंगे? दरअसल वाइसमैन का यह प्रयोग हमें मजबूर करता है कि परिणामों के विश्लेषण में थोड़ा-बहुत सांख्यिकी का उपयोग करें। जैसे पूँछों के नाप का औसत निकालें वगैरह।

इसी प्रकार का एक प्रयोग कोलम्बिया विश्वविद्यालय की एक

प्रयोगशाला में 1907 में फर्नांडस पेन ने भी किया था। उन्होंने अपने प्रयोग के लिए एक फल-भक्षी मक्खी *ड्रॉसोफिला* का उपयोग किया था। उन्होंने *ड्रॉसोफिला* का उपयोग इसलिए किया था क्योंकि यह जल्दी-जल्दी प्रजनन करती है और कम समय में कई पीढ़ियों (लगभग 15 दिन में एक पीढ़ी) का अध्ययन किया जा सकता है। पेन ने *ड्रॉसोफिला एम्पिलोफायला* (जिसे आजकल *ड्रॉसोफिला मेलेनोगेस्टर* कहते हैं) को अन्धकार में रखा। वे देखना यह चाहते थे कि जब अन्धकार में इन मक्खियों को आँखों का उपयोग नहीं करना पड़ेगा तो क्या इनकी आँखें छोटी हो जाएँगी। पूरी 49 पीढ़ियों को इस तरह अन्धकार में रखा गया मगर आँखें रत्ती भर भी छोटी नहीं हुईं।

परिकल्पना के दावों की जाँच करने से सम्बन्धित इसी प्रकार का एक और प्रयोग देखने के बाद हम प्रयोगों की एक विशेष समस्या पर बातचीत करेंगे।

तथ्यों की व्याख्या के लिए कोई भी परिकल्पना प्रस्तुत की जाए, उसमें से कुछ दावे सामने आते हैं। यदि ये दावे ऐसे हैं जिनकी प्रयोगों या अवलोकनों की मदद से जाँच सम्भव है, तो उस परिकल्पना को हम वैज्ञानिक परिकल्पना मान सकते हैं। दूसरे शब्दों में, कोई भी वैज्ञानिक परिकल्पना ऐसी होनी चाहिए कि उसे गलत साबित करने की गुंजाइश हो।

ऐसा तो नहीं कहा जा सकता कि वाइसमैन ने पाँच पीढ़ियों तक चूहों की पूँछ काटी, 901 चूहों का अवलोकन किया और लैमार्क का विचार कूड़ेदान में चला गया। मगर इस प्रयोग ने इतना तो स्पष्ट कर दिया कि अर्जित गुणों के हस्तान्तरण की बात बहुत विश्वसनीय नहीं है। यह प्रयोग इसी मायने में ऐतिहासिक महत्व रखता है। जैव-विकास की जो वैकल्पिक व्याख्या डार्विन ने प्रस्तुत की थी उसके पक्ष में प्रमाण बढ़ते गए और जीव विज्ञान में प्राकृतिक चयन आज एक सर्वमान्य सिद्धान्त है।

अगले भाग में हम एक और सवाल का उदाहरण लेकर प्रयोगों के महत्व को समझने की कोशिश करेंगे और एक अलग ढंग के प्रयोग से भी परिचय प्राप्त करेंगे।

(...जारी)

---

**सुशील जोशी:** एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

**सभी चित्र: इशिता बिस्वास:** दिल्ली विश्वविद्यालय से समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर। सृष्टि स्कूल ऑफ आर्ट, डिज़ाइन एंड टेक्नोलॉजी, बैंगलोर से आर्ट और डिज़ाइन में डिप्लोमा। फिलहाल एकलव्य, भोपाल के प्रकाशन समूह के साथ कार्य करती हैं।